ISSN : 3048-6203 Volume -2| Issue -2| July - Dec 2025

शोध भूमि

शिक्षा एवं शिक्षण शास्त्र विषय की पूर्व समीक्षित शोध पत्रिका

Page No. : 361-368

भारतीय साहित्य में भक्ति काव्य का योगदान

डॉ. सुधामणि
एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी)
राजकीय आर.सी. कॉलेज ऑफ कॉमर्स एंड मैनेजमेंट स्टडीज
रेस कोर्स रोड, बेंगलूर, कर्नाटक, भारत
ईमेल:sudhamani905@gmail.com

सारांश

साहित्य का अर्थ है समाज के भलाई के रचित होनेवाली लिखित प्रणाली। भक्ती का अर्थ है – सेवा, आराधना, अत्यंत अनुराग। हिन्दी साहित्य के इतिहास को प्रमुख रूप से चार विभागों में विभाजित किया गया है। 1) वीरगाथा काल 2) भक्ति काल 3) श्रृंगार काल या रीति काल 4) आधुनिक काल। उपरोक्त में से भक्ति काल का समय ''स्वर्ण युग'' माना जाता है। भारतीय साहित्य में भक्ति काल ने सिर्फ देशी भाषाए जैसे अवधी, मरठी को समृद्ध किया सामाजिक समानता, धार्मिक सद्भावना तथा सांस्कृतिक एकता का विकास किया। इसने महान संत महात्म जैसे कबीर, महान कवियां जैसे सूरदास, तुलसीदास, मीराबाई के माध्यम से जनसाधारण को आध्यात्मिक गहराई से जोडा, जिससे भारतीय संस्कृति और दर्शन को एक नई दिशा मिली। भक्ति काव्य का स्वरूप अखिल भारतीय था। दक्षिण भारत में दार्शनिक सिद्धान्तों के आधार से सम्रुद्ध होकर उत्तर भारत में आंदोलन का रूप धारण किया। इसका प्रभाव कला, व्यवहार तथा जीवन सभी क्षेत्रों पर पडा। इसमें कबीर, जायसी,मीरा, सूर, तुलसीदास, रमानन्द, चौतन्य महाप्रभु, वल्ल्लभाचार्य का प्रभाव अधिक माना गया है।

प्रमुख शब्द – स्वर्णयुग, आत्मविश्वास, ज्ञान मार्ग, एकता, आत्मस्थैर्य।

भारतीय साहित्य में भक्ति साहित्य अमूल्य योगदान माना गय है। सम्पूर्ण भारत देश में भक्तिधारा का प्रभाव विभिन्न भाषाओं में विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित था। इससे लोगों के बीच एकता की भावना स्थापित हुई।

भक्ति धारा से, समाज में स्थित विभिन्न क्षेत्रों के समस्याओं सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक, राजकीय, आर्थिक सवालों का समाधान करने में मदद हुई। लोगों के मन में आत्मविश्वास तथा ज्ञान की चक्क्षु खिल उठी।

भक्ति काव्य के भेद

भ्क्ति काव्य के प्रमुख रूप से दो भेद माना गया है। निर्गुण भक्ति धारा तथा सगुण भक्ति धारा। निर्गुण भक्ति धारा के दो शाखाए है ज्ञानमार्गी जिसके प्रतिनिधि कवि है कबीरदास और प्रेममार्गी जिसके प्रतिनिधि कवि मलिक मुहम्मद जायसी है। सगुण भक्तिधारा के भी दि शाखाए है, कृष्ण भक्ति शाखा जिसके प्रतिनिधि कवी है सूरदास और राम भक्ति शाखा जिसके प्रतिनिधि कवि है तुलसीदास।

हिन्दी साहित्य में कृष्ण भक्ति

हिन्दी साहित्य क्षेत्र में कृष्ण भक्ति धारा के प्रवर्तक श्री वल्लभाचार्य को माना गया है। उनका विशिष्टाद्वैत सिद्धांत था। हिन्दी भाषा साहित्य में कृष्ण भक्ति के सबसे बडे कवि सूरदास है। वे व्ल्लभाचार्य के शिष्य थे। वल्लभाचार्य ने उनको पुष्टिमार्ग में करके कृष्णलीला के पद गाने का आदेश दिया। बाद में सूरसागर जैसे महाकृतियों की रचना की।

सूरदास के बाद श्री कृष्ण भाक्ति धारा के मशहूर कवयित्री है मीराबाई। मीराबाई के पद अब भी नक्षत्र की भांती हिन्दी साहित्य क्षेत्र में प्रकाशमान है। मीराबाई ने अपना समस्त जीवन भक्ति भाव में ही बिताया। उनके भजनों में इतनी प्रबलता से प्रेम–धारा बहती है कि उससे आद्र हुए बिना कोई सहृदय नहीं रह सकता। हिन्दी साहित्य में भक्ति काव्य द्वारा धार्मिक और दार्शनिक सम्रुद्धी भी होने लगी। निर्गुण (कबीर) और सगुण धाराओं ने ईश्वर के निराकार और साकार दोनों रूपों की भक्ति का मार्ग दिखाया।

हिन्दी साहित्य क्षेत्र में भक्तिकालीन साहित्य को स्वर्णयुग साहित्य माना जाता है । भक्तिकालीन साहित्य मे निर्गुण उपासना तथा सगुण उपासना, रहस्यवादी, यतार्थवादी तथा आदर्श्वादी विचारधाराओं का सम्मिलन है। इस काल में साहित्य क्षेत्र तो जीवन से निकट था। इसलिए साहित्य का प्रभाव लोगों पर था। भक्ति काल का पथ तथा संदेश, उस समय के समस्याओं को दूर करने का मार्गदर्शक भी था। निर्गुण परब्रह्मा का आराधक कबीर के समन्वयतावाद, जायसी जैसे सूफी कवियों की उदारता, सूरदास, मीराबाई, रसखान जैसे महकवियों के काव्य में निहित प्रेमाख्यान की भावना अद्भुत थी।

भक्तिकाल में संत कवियों का साहित्य में विशिष्ट योगदान है। इस युग में सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, आर्थिक, धार्मिक क्षेत्रों का हालत बहूत गम्भीर था। उस समय संत कवियों ने आत्मगौरव को प्रामुखता देकर वैचारिक क्रांति का सूत्रपात किया। सिर्फ संत काल में ही नहीं, भारतीय साहित्य के हर एक आयाम में, गुरू को प्रमुखता देते आये है। गुरू को अंधकार, माया, अज्ञान को दूर करके जीवन को सार्थक करने का शक्ति माना गया है। तुलसीदास ने अपने साहित्य में, आदर्श्वाद के साथ–साथ, भौतिक धरातल पर जीने का मार्ग दिखाता है। तुलसीदास के साहित्य

में वर्णित, वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक आचरण के आदर्श भी प्रत्येक युग में प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है।

सूफि प्रेम काव्यों में भी हिन्दू लोक संस्कृती की वैयक्तिकता तथा सामाजिकता का चित्रण भी झलकता है। हिन्दू संस्कृती में व्याप्त अन्धविश्वास, पूजा, व्रत आदि का उल्लेख भी मिलता है। भक्तिकालीन साहित्य में आध्यात्मिकता व सामाजिकता का समन्वय है।

भक्ति आंदोलन की सामाजिक और धार्मिक मान्यताओं ने उत्तर भारत के साहित्यिक परंपराओं पर गहरा प्रभाव पडा। आध्यात्मिक अभिव्यक्ति, सामाजिक सुधार और समावेशता को बढावा देकर, भक्ति आंदोलन ने ईश्वर के प्रति व्यक्तिगत भक्ति पर विश्वास रखकर पुरानी धार्मिक और जातिगत बाधाओं को दूर कर दिया। कबीर, मीराबाई, तुलसीदास और गुरु नानक जैसे भक्त संतमहात्माओं और कवियों ने अपने दार्शनिक प्रवचन, सामाजिक पदानुक्रमों की आलोचना और भक्ति कविता के साथ हिन्दी साहित्य समृद्ध किया। प्रेम, भक्ति, समानता और औपचारिक रीति–रिवाजों का खंडन तो भक्तिकालीन लेखन में प्रमुख विषय था। इसके अतिरिक्त, इस विषय पर जोर देता है कि जैसे धार्मिक लेखन को सामान्य आंग्रेजी भाषा में अनुवादित किया गया, जिससे आध्यात्मिक शिक्षाएं आम जनता के लिए अधिक सुलभ हो गई तथा इसके साथ–साथ क्षेत्रीय भाषाओं के विकास में अपना योगदान किया।भक्ति आंदोलन का हिन्दी साहित्य के विकास पर स्थायी प्रभाव, जिसने अपनी तकनिकों, काव्य रूपों और सामाजिक प्रभाव के माध्यम से सामाजिक प्रासंगिकता को और आध्यात्मिक गहराई तक पहुंचा दिया।

हिन्दी भक्ति काव्य मे दक्षिण का योगदान

प्रथम भक्ति की धारा द्रविड़ में उत्पन्न हुई। दक्षिण की उस भक्ति को रामानन्द उत्तर भारत में, लेकर आए। भक्ति की इस धारा को कबीर ने सात द्वीपों और नौ खण्डों में प्रकट किया अर्थात चारो ओर भक्ति का जो प्रसार दिखाई देता है, उसका मूल द्रविड़ प्रान्तों से ही है। इस लोक प्रचलित विश्वास में कोई विश्वास करे या न करे, पर इतना कह सकते है कि दक्षिण भारत में भक्ति का उदय उत्तर भारत से पहले हुआ।

दक्षिण भारत के भक्ति आन्दोलन के विकास में अन्य द्रविड़ प्रदेशों की अपेक्षा तमिल प्रदेश का महत्त्वपूर्ण योगदान है। प्राचीन तमिल समाज तोलकपिप्पयर काल (ई.पू. 500) से संगोत्तर काल (सन् 100) तक का समाज है। प्राचीन संगम काल में और बाद में तमिल के प्रथम प्रबन्ध–काव्य शिल्पदिकारम' में भक्ति की छाया मिलती है। तिरुमूलर कहीं–कहीं फिर सन् 600 की रचना तिरुमन्दिरम्' में पहली बार भक्ति, भक्त आदि शब्दों का प्रयोग देखते हैं। तमिल की नीतिपरक रचना तिरुक्कुरल में भक्ति से सम्बन्धित उपदेश मिलते हैं।

संगम साहित्य के अन्तर्गत आनेवाले परिपाडल में (परिपाडल, 63–68) स्पष्ट रुप से बताया गया है कि ईश्वर प्रकृति कण–कण में व्याप्त है। संगोत्तरकाल (सन् 200) की प्रख्यात रचना शिल्पादिकारम' में ग्वालों द्वारा श्रीकृष्ण की महिमा गाई गई है। कुरवैकूत्तु कथा में श्रीकृष्ण के साथ बलराम, नप्पिन्नै (राधा) का वर्णन भी मिलता है। परवर्ती आलवार साहित्य में यही नप्पिनै (राधा या गोपी) दिखाई पड़ती है।

पाँचवी–छठी शताब्दियों में तमिल प्रदेश की धार्मिक स्थिति अनाचार और अनैतिकता से पूर्ण थी। राजाश्रय के कारण बौद्धों और जैनों ने शैव और वैष्णव धर्मों पर प्रहार करना आरंभ कर दिया था। आरम्भ में जैन व बौद्ध धर्म के उदात्त भावों का तमिल जनता ने स्वागत किया। आगे चलकर धर्म में ब्रह्मचर्य और भिक्षावृत्ति पर जोर देने के कारण परम्परा से गृहस्थ जीवन के उच्च आदर्शों का पालन करने वाली तमिल जनता को बौद्धों का यह अमर्यादित भिक्षु जीवन समझ में नहीं आया। तमिल जनता एक ओर वैदिक ब्राह्मणों के कठोर जातिवाद के चंगुल में फंसी थी, तो दूसरी तरफ बौद्ध तथा जैन धर्मावलम्बियों के प्रचार का असर भी पड़ रहा था। ये दोनों धर्म जातिवाद से काफी हद तक मुक्त थे। युग की इसी माँग की पूर्ति हेतु छठी से लेकर चौदहवीं शती तक शैव संतों और वैष्णव सन्तों द्वारा प्रवर्तित भक्ति मार्ग सामने आया क्योंकि उसमें न तो जातिगत भेदभाव था, न तो ब्रह्मचर्य की शर्त। प्रारम्भ में भक्ति आन्दोलन के मोर्चे पर शैव सन्त ही प्रमुख थे, फिर बाद में वैष्णव भक्त भी उनके साथ मिल गए।

इस भक्ति आन्दोलन और भक्ति साहित्य को आगे बढ़ाने का पूरा श्रेय शैव नायन्मार, अप्पर, सम्बन्धर, सुन्दरर, वैष्णव सन्तों को जाता है। जैनों द्वारा संन्यास पर जोर देने के कारण, समाज की स्त्रियाँ भक्ति क्षेत्र में उपेक्षित थीं, नायन्मारों में से एकमात्र स्त्री कारैक्काल अम्मैयार, और वैष्णव आलवारों में से आण्डाल ने अपने जन सुलभ भक्ति–मार्ग में दिव्य रचनाएँ कर स्त्रियों को भक्ति की उत्कृष्ट अधिकारिणी के रुप में मान्यता दिलाई। इस प्रकार सन् 300 से सन् 600 तक प्रचलित भक्ति भावना शैव मतों एवं सातवीं शती तक पहुँचते–पहुँचते वैष्णव सन्त आलवारों द्वारा दक्षिण के सभी प्रान्तों में फैलने लगा।

शैव साहित्य

अप्पर के अनुसार ईश्वर घट–घट व्यापी है, उनकी कृपा के बिना कुछ भी सम्भव नहीं (देवारम, 7175)। स्वतन्त्र विचार से उन्होंने जातिगत भेदभाव के खिलाफ गीतों की रचना की (देवारम 5832 सप्तम तिरुमुरैकल के कवि सुन्दर मूर्ति (आठवीं शती) है। उनके गीतों में प्रमुख है पोण्णर मेनियने शीर्षक गीत, जो आज भी तमिल जनमानस में सर्वोपरि है। वे शिवजी के दिव्य मंगलमय रुप वर्णन करने में सिद्धहस्त हैं।

अष्टम तिरुमुरैकल के अन्तर्गत आठवीं शती के शैव भक्त कवि श्री माणिक्कवाचकर की रचना तिरुवाचकम एवं तिरुक्कोवैयार के भक्ति गीत आते हैं। कण–कण में उस ईश्वर का दर्शन करने वाले शैव भक्त कवि माणिक्कवाचकर की रचना तिरुवाचकम तमिल साहित्य का मुकुटमणि काव्य है। ईसाई धर्मोपदर्शक जी. यू. पोप ने तिरुवाचकम का अनुवाद भी किया था।

वैष्णव साहित्य

नालायिर दिव्यप्रबंधम् छठी से नौवीं शती तक इन आलवारों का समय माना गया था, जिनके चार सहस्त्र वैष्णव गीत (पाशुरम) नालायिर दिव्यप्रबन्धम' के नाम से श्री नाथ मुनि द्वारा संकलित किया गया है। नालायिरम का शाब्दिक अर्थ है चार सहस्त्र।

तमिल साहित्य के इतिहास में छठी से नौवीं शताब्दी तक का समय मुख्यतया भक्तिकाल कहा जाता है। इसी काल में प्रसिद्ध वैष्णव भक्ति के कवि आलवार रचनारत थे। आलवारों ने भगवान

विष्णु की अनन्त शक्ति और उनके विविध ऐश्वर्य को भक्ति का आधार बनाया है। श्रद्धापूर्वक अपनी हीनता को प्रकट करते हुए, जीव उस परब्रह्म का दास बनने की कामना करता है। इन कवियों ने प्रेम को परमतत्त्व मानते हुए उसी को परमाराध्य माना है। इनके द्वारा भक्ति जीवन के विधायक तत्त्व के रुप में स्वीकार की गई, इसमें विष्णु के सभी रूपों को स्वीकार किया गया और सगुण साकार का आग्रह होते हुए भी सगुण और निर्गुण में समन्वयवादी दृष्टि निरन्तर बनी रही। भक्ति और लोक संग्रह का सम्बन्ध इन कवियों की चिन्तनधारा का विशेष अंग है। आलवार का शाब्दिक अर्थ है गोता लगानेवाला। भक्ति में गोता लगाने के कारण वे आलवार कहलाए गए।

आलवारों की संख्या बारह है – इनके द्वारा गाए गीतों को संकलित करने का श्रेय श्रीनाथ मुनि को जाता है। आलवारों के भक्ति–साहित्य को दिव्य प्रबन्धम नाम से अभिहित किया जाता है। यह वैष्णव भक्ति आन्दोलन और वैष्णव भक्ति साहित्य के इतिहास में बहुआयामी भक्ति ग्रन्थ है। इन बारह आलवारों में कुछ आलवारों की रचना एवं विचार निम्नलिखित हैं।

आलवार की रचना मुदल तिरुवन्दादि में एकाश्रय ग्रहण के साथ–साथ समन्वयात्मकता भी है। यह रचना 'अन्दादि' शैली अर्थात अन्त्यशब्द शैली में लिखी गई।

पेरियालवार भक्त के साथ–साथ पण्डित भी हैं। इन्होंने श्री कृष्ण के वात्सल्य वर्णन में पिल्लै तमिल (शिशु तमिल) नामक एक नई भाषा–शैली का प्रयोग किया। इनकी दो रचनाएँ हैं – तिरुपल्लाण्डु और तिरुमोलि।

बाहर आलवारों में एक मात्र महिला भक्त कवि आण्डाल हैं। उन्होंने श्रीरंगम् क्षेत्र के शेषसायी भगवान श्रीरंगनाथ (विष्णु) एवं श्रीकृष्ण में अभिन्नता स्वीकार की। हर एक दिन, वे विष्णु के अवतार श्रीकृष्ण के प्रति आकृष्ट होकर उनकी महिमाएँ गाते थे। 'आण्डाल' अपने विल्लित्तूर को ब्रज मानकर खुद गोपी बनकर भक्ति का आस्वादन करती रहीं। आण्डाल की कविताएँ प्रेम–पीड़िता नारी की विभिन्न भावावस्थाओं का मार्मिक चित्र है। उन्होंने श्रीकृष्ण के प्रति नायक–नायिका भाव से आराधना की। श्रीकृष्ण को अपने इष्टदेव एवं पति के रुप में स्वीकार कर उनके प्रति आत्मीय प्रेम भाव का प्रकट किया। उनकी दो रचनाएँ हैं तिरुप्पावै, नाच्चियार तिरुमोलि।

दक्षिण के भक्ति मार्ग व भक्ति सिद्धान्त की विशेषताएँ

दक्षिण के भक्तों ने भक्ति को आसान बनाने हेतु कुछ पद्धतियाँ अपनाकर अपने भक्ति–मार्ग को प्रशस्त किया। उनके भक्ति–मार्ग व भक्ति सिद्धान्त की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

परम्परागत रीतियों से प्रचलित वर्णाश्रम धर्म को हटाकर, उपेक्षित, तिरस्कृत, निम्न जाति के लोगों को भगवद्भक्ति के प्रचार–प्रसार में शामिल कर एकता फैलाया।

तिरुमूलर सम्पूर्ण विश्व को प्रेममय मानकर अपने सिद्धान्तों में प्रेम ही शिव, शिव ही प्रेममय स्वीकारा। भक्त के सन्दर्भ में उनका कथन है कि जिस प्रकार बछड़ा अपनी माता गैया की खोज में जाता है उसी प्रकार भक्त भगवान की खोज में जाता है।

अभिजात्य वर्ग में प्रचलित संस्कृत भाषा को छोड़कर, जनता की बोली बानी में, यानी लोक–भाषाओं में आध्यात्मिक साहित्य का निर्माण किया।

नैतिक मूल्यों को बनाए रखने के लिए पारिवारिक रिश्तों को पवित्र दृष्टि से देखा गया, और नारी के विकास के नए प्रयत्न शुरु हुए। अपने आराध्य प्रियतम भगवान का लौकिक रिश्तों द्वारा वर्णन कर भक्ति मार्ग को जन–सुलभ बनाया।

नृत्य, संगीत, भजन, वाद्य यन्त्र आदि कलात्मक अभिव्यक्ति के उपकरणों का प्रयोग, पूरे भारत के मन्दिरों, देवालयों में भजन के लिए किया गया था। तमिल प्रदेश के धार्मिक व भक्ति आन्दोलनों के परिणामस्वरुप दक्षिण के आचार्य जैसे शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य आदि के शिष्यों ने देश भर में भक्ति के प्रसार–प्रचार करते हुए अनेक धार्मिक संस्थाओं और मठों की स्थापना की। हिन्दी के भक्ति साहित्य में भी यही प्रवृत्ति देखने को मिलती है।

दक्षिण के कई भक्तों व आचार्यों ने उत्तर भारत में, विशेषकर वाराणसी में, अपने धार्मिक पीठ की स्थापना कर भारत भर में आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक एकात्मक एवं उन्नति का सफल प्रयास किया। हिन्दी भक्ति आन्दोलन के प्रवर्तक रामानन्द ने भी इसी का अनुकरण किया।

तमिल प्रान्त के नायन्मार शैव सन्त और आलवार वैष्णव सन्त दोनों ने जनभाषा तमिल में जो गीत मन्दिरों में, जनता के बीच गाए थे, उन गीतों ने तमिल संगीत परम्परा को आगे बढ़ाया। इसी पर आधारित अखिल भारतीय स्तर पर विभिन्न प्रदेशों में उठे भक्ति आन्दोलनों में स्थानीय भाषा, बोली को प्रमुखता देकर संस्कृत भाषा के वैदिक ग्रन्थ भगवद्गीता, रामायण, महाभारत, श्रीमदभागवत, योगशास्त्र, पुराण आदि रचनाएँ अपने–अपने प्रदेश की बोलियों में अनूदित हुईं। जन–सुलभ भाषा में सर्वप्रथम भक्ति गीतों को लाने का श्रेय मात्र नायन्मार व आलवारों को ही जाता है। इससे प्रभावित होकर उत्तर में पालि, प्राकृत अपभ्रंश बाद में अवधी, ब्रज, मैथिली आदि काव्य भाषाएँ बनकर उठने लगीं। डॉ. शेषन का कथन है कि तमिल जनमानस एवं तमिल जनता सदा से ही उत्तर भारत के प्रति उदार, सहिष्णु, ग्रहणशील तथा समन्वयमूलक रही है।

भक्ति आन्दोलन के उन्नायक कुछ प्रमुख आचार्य यहाँ दक्षिण में भक्ति का प्रचार और प्रसार करने वाले कुछ आचार्यों के बारे में बताया गया है।

आदिशंकराचार्य (सन् 788–820)

अद्वैतवाद के प्रवर्तक एवं दक्षिण स्मार्त ब्राह्मण के गुरुपीठाधीश आदिशंकराचार्य का जन्म केरल के कालड़ी प्रान्त में हुआ था। बचपन में ही संन्यास ग्रहण करके भारत के चारो कोणों पर मठों की स्थापना की। उत्तर में जोशीमठ, दक्षिण में शृंगेरी, पूर्व में गोवर्धन मठ, पश्चिम में शारदा मठ की स्थापना कर बौद्ध मत के प्रभाव को सीमित करने और ब्राह्मण धर्म को पुनः स्थापित करने का काम किया. एक ओर उन्होंने सनातन हिन्दू धर्म के दार्शनिक आधार को सुदृढ किया, तो दूसरी ओर जनसामान्य में प्रचलित मूर्ति पूजा का औचित्य सिद्ध कर यह दिखाया कि परमात्मा सगुण व निर्गुण दोनों स्वरुप का है। उन्होंने निर्गुण और सगुण दोनों का समर्थन कर निर्गुण तक पहुँचने के लिए सगुण की उपासना को अपरिहार्य सीढ़ी माना, जिसका उल्लेख तुलसी एवं सूर के साहित्य में स्पष्ट रुप से देखने को मिलता है। शिवानन्दलहरी, सौन्दर्यलहरी, भजगोविन्दम, भवानी अष्टकम, विवेक चूड़ामणि, पंचायुध स्तोत्र (विष्णु पर), निर्वाण शतकम, साधना पंचकम, सिद्धान्त

तत्त्व बिन्दू, देवी पंचरत्न स्तोत्र इसके उदाहरण हैं। उन्होंने ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरीय, बृहदारण्यक और छान्दोग्योपनिषद पर भाष्य लिखा था।

रामानुजाचार्य (सन् 1016–1137)

रामानुजाचार्य का जन्म चेन्नै के निकट तेरुकुन्दर नामक गाँव में हुआ। उन्होंने अपने ग्रन्थ न्याय–तत्त्व में शंकराचार्य के अद्वैतवाद का खण्डन करते हुए एक विशिष्ट अद्वैत "विशिष्टाद्वैत" की स्थापना कर अपने सिद्धान्तों को आगे बढ़ाया। इस मत के अनुसार ब्रह्म, जीव और जगत तीनों उसी तरह सत्य है जैसे शरीर और उसके विभिन्न अंग। आलवारों के बाद रामानुजाचार्य की भक्ति भावना को प्रशस्ति मिली। उन्होंने रामभक्ति को सर्वांगपूर्ण उपासना योग्य बनाया और शंकर के मायावाद का तर्कपूर्ण खण्डन किया। रामानुजाचार्य आलवारों के पाशुरों को गाकर तन्मय होते थे। विष्णु के राम व कृष्णावतार को अर्चावतार की संज्ञा देकर नाम महिमा, कीर्तन, अर्चन, शरणागति, गुरु महिमा, सत्सांगत्य की महिमा, शरीर की नश्वरता, विष्णु के अवतारों में से एक श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं का वर्णन मधुर भाव, राधा भाव, नवधा भक्ति की स्वीकृति आदि को बड़ी तन्मयता से प्रचार व प्रसार करते थे।

मध्वाचार्य (सन् 1257)

मध्वाचार्य या आनन्दतीर्थ का जन्म मंगलोर(कर्नाटक) के पास उडपि में हुआ। वे द्वैतवाद के प्रतिपादक थे। उन्होंने अपने सिद्धान्त श्रीभागवत पुराण के आधार पर प्रतिपादित किया। वेदांत सूत्र और अनुभाष्य सिद्धान्त उनकी रचनाएँ हैं। उनके अनुसार विष्णु या उनके अवतार श्रीकृष्ण ही एक मात्र अविनाश परब्रह्म हैं। ब्रह्म स्वतन्त्र है, जीव परतन्त्र। दोनों में स्वामी एवं सेवक का सम्बन्ध है। परब्रह्म कृष्ण की प्राप्ति के लिए साधन है, एक मात्र उनके प्रति असीम भक्ति रखने वाली राधा इस सम्प्रदाय में मान्य नहीं है।

विष्णु स्वामी शुद्धाद्वैत (सन् 1320)

विष्णु स्वामी मध्वाचार्य के अनुयायी हैं, उन्होंने शुद्धाद्वैत की स्थापना की, जो आगे चलकर वल्लभाचार्य के नेतृत्व में पुष्टिमार्ग बनकर हिन्दी भक्ति साहित्य के मार्ग को प्रशस्त किया। विष्णुस्वामी ने श्रीकृष्ण को प्रियतम आराध्य मानकर राधा को भी भक्ति में प्रधान स्थान दिया। उन्होंने गीता, वेदान्त सूत्र और भागवत पुराण पर भाष्य लिखे।

निम्बार्काचार्य द्वैताद्वैतवाद

बारहवीं शती में आंधप्रदेश में उनका जन्म हुआ, वे तेलुगु भाषी वैष्णव सन्त थे। भ्रमण करते करते वृन्दावन में बस गए। वे राधाकृष्ण के उपासक होने के साथ–साथ रामानुज से विशेष प्रभावित थे। श्रीकृष्ण के साथ राधा की महानता इस सम्प्रदाय की विशेषता है, गीत गोविन्द के कवि भक्त जयदेव उनके शिष्य थे।

श्री रामानन्द (संवत 1356)

आलवारों द्वारा प्रचलित रामोपासना से प्रभावित होकर उत्तर भारत में राम भक्ति का प्रसार–प्रचार सर्वप्रथम उन्होंने ही किया। रामानन्द ने श्री सम्प्रदाय के नियमानुसार भक्ति को जाति बन्धन से मुक्त कर उसे जन–सुलभ बनाया। सभी जाति के भक्त उनके शिष्य थे। उन्होंने विष्णु के स्थान पर राम की भक्ति पर जोर दिया। राम एवं सीता की मर्यादापूर्ण भक्ति का प्रचार कर उत्तर भारत में वैष्णव भक्ति की नींव डाली। उनके दो प्रमुख शिष्य हिन्दी भक्ति साहित्य के ध्वजस्तंभ बने – एक तो निर्गुण शाखा के प्रमुख कवि कबीर दास, दूसरे रामभक्त कवि गोस्वामी तुलसी दास। (रामानन्द के शिष्य नरहरिदास थे जो गोस्वामी तुलसी के गुरु थे)। एक ही गुरु ने दो भिन्न शाखा के श्रेष्ठ भक्ति कवियों का मार्गदर्शन किया। कुछ विद्वानों का मत है कि कबीर रामानंद के शिष्य नहीं थे ।

निष्कर्ष :–

हिन्दी ही नहीं, पूरे भारतीय भक्ति साहित्य के विकास में दक्षिण भारत का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भक्ति काल में भक्ति – भाव के प्रचार तथा प्रसार से लोगों के मन में आत्मविश्वास की भावन पैदा हुई। ज्ञान की चक्क्षु खिल उठी। सवालों का सामना करने की क्षमता विकसित हुई। जनता में प्यार की नाथा बांधने लगी। ज्ञान मार्ग प्रचलित होने लगी। भक्ति मार्ग का प्रचार तथा प्रसार विभिन्न भाषाओं तथा बोलियों में होने के कारण, साधारण जनता भी इससे प्रभावित हुए। जीवन को सार्थक करने की भावना पैदा होने लगी। मेहनती की तरफ ध्यान देने लगे। चारों ओर खुशी का वातावरण था। इसलिए भक्तिकाल को ''स्वर्ण काल'' कहते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- https://ijlemr.net/papers/A01010105.pdf
- https://edukemy.com/blog/evaluate-the-nature-of-bhakti-literature-and-its-contribution-to-indian-culture-answer-in-150-words/
- https://ijlemr.net/papers/A01010105.pdf
- https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/27791/1/Unit-3.pdf
- https://testbook.com/ugc-net-hindi/bhakti-kaavy-ke-pramukh-sampradaay
- https://www.google.com/search?q=bhaaratiya+saahitya+me+bhakti+kaavya+ka+yogadaan+in+hindi&oq=&aqs=chrome.0.35i39i362j46i39i362j35i39i362l6.806719j0j15&sourceid=chrome&ie=UTF-8
- https://pwonlyias.com/pyq/evaluate-the-nature-of-the-bhakti-literature-and-its-contribution-to-indian-culture-150-words-10-marks/